चुभने से ही तमाम रात नींद नहीं आयी थी। उसका बाप और उसकी मां तमाम रात उसके सिरहाने बैठे रहे थे। इस ख्याल के आते ही उसे ऐसा मालूम होने लगा कि जैसे वह ज़ख्म खुद उसकी पिंडली में है और उसमें बहुत तेज़ दर्द है। वह एकदम रोने लगा।

खालिद के रोने की आवाज़ सुनकर उसकी मां दौड़ी-दौड़ी आयी और उसको गोद में लेकर पूछने लगी, "मेरे बच्चे, रो क्यों रहे हो ?"

"मम्मी, उसे किसी ने मारा है।"

"शरारत की होगी उसने !"

"मगर स्कूल में तो छड़ी से सज़ा देते हैं। लहू तो नहीं निकालते।"

"छड़ी ज़ोर से लग गयी होगी।"

"तो फिर क्यों इस लड़के का वालिद स्कूल में जाकर उस्ताद पर खफा न होगा, जिसने उस लड़के को इस कदर मारा है। एक रोज़ जब मास्टर साहब ने मेरे कान खींचकर सुर्ख कर दिये थे तो अब्बा जी ने हेडमास्टर के पास शिकायत की थी न !"

"इस लड़के का मास्टर बहुत बड़ा आदमी है।"

"अल्लाह मियां से भी बड़ा ?"

"नहीं, उनसे छोटा है।"

"तो, फिर वह अल्लाह मियां के पास शिकायत करेगा ?"

"अब देर हो गयी है, चलो सोयें।"

"अल्लाह मियां, मैं दुआ करता हूं कि तू उस मास्टर को, जिसने इस लड़के को पीटा है, अच्छी तरह सज़ा दे और उस छड़ी को छीन ले, जिसके इस्तेमाल से ख़ून निकल आता है···मैंने पहाड़े याद नहीं किये इसलिये मुझे डर है कि कहीं वही छड़ी मेरे उस्ताद के हाथ न आ जाये।—अगर तुमने मेरी बात न मानी तो फेर मैं भी तुमसे नहीं बोलूंगा !" सोते वक्त खालिद दिल में दुआ मांग रहा था।

ed. Devendra Issar
Delhi: Indraprastha Prakashan, 1991

नया कानून

मंगू कोचवान अपने अड्डे में बहुत बुद्धिमान समझा जाता था। यद्यपि उसकी शैक्षणिक स्थिति शून्य के बराबर थी और उसने कभी स्कूल का मुंह नहीं देखा था लेकिन इसके बावजूद उसे दुनिया-भर की चीज़ों का ज्ञान था। अड्डे के वे तमाम कोचवान जिनको यह जानने की इच्छा होती थी कि दुनिया के अन्दर क्या हो रहा है, उस्ताद मंगू की विस्तृत जानकारी से भली-भांति परिचित थे।

पिछले दिनों जब उस्ताद मंगू ने अपनी एक सवारी से स्पेन में जंग छिड़ जाने की अफवाह सुनी थी तो उसने गामा चौधरी के चौड़े कन्धे पर थपकी देकर बुद्धिमत्तापूर्ण अंदाज़ में भविष्यवाणी की थी, "देख लेना चौधरी, थोड़े ही दिनों में स्पेन में जंग छिड़ जायेगी।"

और जब गामा चौधरी ने उससे पूछा था कि स्पेन कहां स्थित है तो उस्ताद मंगू ने बड़ी गम्भीरता से जवाब दिया था, "विलायत में और कहां ?" स्पेन में जंग छिड़ी और जब प्रत्येक व्यक्ति को उसका पता चल गया तो स्टेशन के अड्डे में जितने कोचवान झुण्ड बनाये हुक्का पी रहे थे, मन ही मन उस्ताद मंगू की महानता को मान रहे थे। और उस्ताद मंगू उस समय माल रोड की चमकीली सतह पर तांगा चलाते हुए अपनी सवारी से ताज़ा हिन्दू-मुस्लिम झगड़े पर विचारों का आदान-प्रदान कर रहा था।

उस दिन शाम के करीब जब वह अड्डे में आया तो उसका चेहरा असाधारण रूप से तमतमाया हुआ था। हुक्के का दौर चलते-चलते जब हिन्दू-मुस्लिम झगड़े की बात चली तो उस्ताद मंगू ने सिर पर से खाली पगड़ी उतारी और बगल में दबाकर बड़े चिन्तित स्वर में कहा—

"यह किसी पीर के शाप का नतीजा है कि आये दिन हिन्दुओं और मुसलमानों में चाकू और छुरियां चलती रहती हैं, और मैंने अपने बड़ों से सुना है कि अकबर बादशाह ने किसी दरवेश का मन दुखाया था और उस दरवेश ने दुखी

होकर यह शाप दिया था—जा, तेरे हिन्दुस्तान में हमेशा फसाद ही होते रहेंगे—और देख लो, जब से अकबर बादशाह का राज्य खत्म हुआ है हिन्दुस्तान में फसाद पर फसाद होते रहते हैं।" यह कहकर उसने ठण्डी सांस भरी और फिर हुक्के का दम लगाकर अपनी बात शुरू की, "ये कांग्रेसी हिन्दुस्तान को आज़ाद कराना चाहते हैं। मैं कहता हूं, अगर ये लोग हज़ार साल भी सिर पटकते रहें तो कुछ न होगा। बड़ी से बड़ी बात यह होगी कि अंग्रेज़ चला जायेगा और कोई इटली वाला आ जायेगा या रूस वाला जिसके विषय में मैंने सुना है कि बहुत शक्तिशाली आदमी है। लेकिन हिन्दुस्तान सदा गुलाम रहेगा। हां, मैं यह कहना भूल ही गया कि पीर ने यह शाप भी दिया था कि हिन्दुस्तान पर हमेशा बाहर के आदमी राज करते रहेंगे।"

उस्ताद मंगू को अंग्रेज़ों से बड़ी घृणा थी और इस घृणा का कारण तो वह यह बताया करता था कि वे उसके हिन्दुस्तान पर अपना सिक्का चलाते हैं और तरह-तरह के ज़ुल्म ढाते हैं। मगर घृणा करने का सबसे बड़ा कारण यह था कि छावनी के गोरे उसे बहुत सताया करते थे। वे इसके साथ ऐसा व्यवहार करते थे जैसे वह कोई एक ज़लील कुत्ता है। इसके अलावा उसे उनका रंग भी बिल्कुल पसन्द न था। जब कभी वह गोरे के सुर्ख व सफेद चेहरे को देखता तो उसे मतली-सी आ जाती। न मालूम क्यों वह कहा करता था कि उनके लाल झुर्रियों-भरे चेहरे को देखकर मुझे वह लाश याद आ जाती है जिसके जिस्म पर से ऊपर की झिल्ली गल-गलकर झड़ रही हो।

जब किसी शराबी गोरे से उसका झगड़ा हो जाता तो सारा दिन उसका मन अशान्त रहता और वह शाम को अड्डे में आकर हल मारकर सिगरेट पीता या हुक्के के कश लगाते हुए किसी गोरे को जी भरकर सुनाया करता।

"..." यह मोटी गाली देने के बाद वह अपने सिर को ढीली पगड़ी समेत झटका देकर कहा करता था, "आग लेने आये थे, अब घर के मालिक ही बन गये हैं। नाक में दम कर रखा है इन बन्दरों की औलाद ने। यूं रौब गांठते हैं जैसे हम इनके बाबा के नौकर हैं..." इस पर भी उसका गुस्सा ठण्डा नहीं होता था। जब तक उसका कोई साथी उसके पास बैठा रहता वह अपने सीने की आग उगलता रहता।

"शक्ल देखते हो न तुम उसकी—जैसे कोढ़ हो रहा है—बिल्कुल मुर्दार।

एक धप्पे की मार और गटपट-गटपट यूं बक रहा था जैसे मार ही डालेगा। तेरी जान की कसम, पहले जी में आई कि मलाऊन की खोपड़ी के पुर्ज़े उड़ा दूं, लेकिन इस ख्याल से टल गया कि इस मरदूद को मारना अपनी हतक है..." यह कहते-कहते थोड़ी देर के लिए वह खामोश हो जाता और नाक को खाकी कमीज़ की आस्तीन से साफ करने के बाद फिर बड़बड़ाने लग जाता।

"कसम है भगवान की, इन लाट साहबों के नाज़ उठाते-उठाते तंग आ गया हूं। जब कभी उनका मनहूस चेहरा देखता हूं, रगों में खून खौलने लग जाता है। कोई नया कानून बने तो इन लोगों से नजात मिले। तेरी कसम, जान में जान आ जाये।"

और जब एक रोज़ उस्ताद मंगू ने कचहरी से अपने तांगे पर दो सवारियां लादीं और उनकी गुफ्तगू से उसको पता चला कि हिन्दुस्तान में जदीद कानून लागू होने वाला है तो उसकी खुशी की कोई सीमा न रही।

वे मारवाड़ी जो कचहरी में अपने दीवानी मुकदमे के सिलसिले में आये थे, घर जाते समय नया कानून अर्थात् इण्डिया एक्ट के विषय में आपस में बातचीत कर रहे थे, "सुना है कि पहली अप्रैल से हिन्दुस्तान में नया कानून चलेगा—क्या हर चीज़ बदल जायेगी?"

"हर चीज़ तो नहीं बदलेगी मगर कहते हैं कि बहुत कुछ बदल जायेगा और हिन्दुस्तानियों को आज़ादी मिल जायेगी।"

"क्या ब्याज के विषय में भी कोई नया कानून पास होगा?"

उन मारवाड़ियों की बातचीत उस्ताद मंगू के मन में अवर्णनीय खुशी पैदा कर रही थी। वह अपने घोड़े को हमेशा गालियां देता था और चाबुक से बुरी तरह पीटा करता था, मगर उस दिन वह बार-बार पीछे मुड़कर मारवाड़ियों की तरफ देखता और अपनी बढ़ी हुई मूंछों के बाल एक अंगुली से बड़ी सफाई के साथ ऊंचे करके घोड़े की पीठ पर बागें ढीली करते हुए बड़े प्यार से कहता, "चल बेटा चल—ज़रा हवा से बातें करके दिखा दे।"

मारवाड़ियों को उनके ठिकाने पहुंचाकर उसने अनारकली में दीनू हलवाई की दुकान पर आधा सेर दही की लस्सी पीकर एक बड़ी डकार ली और मूंछों को मुंह में दबाकर उनको चूसते हुए ऐसे ही बुलन्द आवाज़ में कहा, "हत् तेरी ऐसी की तैसी।"

शाम को जब वह अड्डे को लौटा तो असामान्यतः उसे वहां अपनी जान-पहचान का कोई आदमी न मिल सका। यह देखकर उसके सीने में एक अजीब व गरीब तूफान उठ खड़ा हुआ। आज वह एक बड़ी खबर अपने दोस्तों को सुनाने वाला था—बहुत बड़ी खबर और उस खबर को अपने अन्दर से बाहर निकालने के लिये वह सख्त मजबूर हो रहा था। लेकिन वहां कोई था ही नहीं।

आध घण्टे तक वह चाबुक बगल में दबाये स्टेशन के अड्डे की लोहे की छत के नीचे बेदिली की हालत में टहलता रहा। उसके दिमाग में बड़े अच्छे-अच्छे विचार आ रहे थे। नये कानून के लागू होने की खबर ने उसको एक नयी दुनिया में लाकर खड़ा कर दिया था। वह उस नये कानून के विषय में, जो पहली अप्रैल से हिन्दुस्तान में लागू होने वाला था, अपने मस्तिष्क की तमाम बत्तियां रोशन करके सोच-विचार कर रहा था। उसके कानों में मारवाड़ी की यह आशंका "क्या ब्याज के विषय में भी कोई कानून पास होगा ?" बार-बार गूंज रही थी और उसके तमाम शरीर में प्रसन्नता की लहर दौड़ा रही थी। कई बार अपनी घनी मूंछों के अन्दर हंसकर उसने मारवाड़ियों को गाली दी, "गरीबों की खटिया में घुसे हुए खटमल—नया कानून उनके लिए खौलता हुआ पानी होगा ?"

वह अत्यन्त प्रसन्न था। विशेषकर उस समय उसके मन को बहुत ठण्डक पहुंची जब वह ख्याल करता कि गोरों—सफेद चूहों (वह उनको इसी नाम से याद करता था) की थूथनियां नये कानून के आते ही बिलों में सदा के लिए गायब हो जायेंगी।

जब नत्थू गंजा पगड़ी बगल में दबाये अड्डे में दाखिल हुआ तो उस्ताद मंगू बढ़कर उससे मिला और उसका हाथ अपने हाथ में लेकर ऊंची आवाज़ में कहने लगा, "ला हाथ इधर—ऐसी खबर सुनाऊं कि जी खुश हो जाये—तेरी इस गंजी खोपड़ी पर बाल उग आयें।"

और यह कहकर मंगू ने बड़े मज़े ले-लेकर नये कानून के बारे में अपने दोस्त से बातें शुरू कर दीं। बातचीत के दौरान उसने कई बार नत्थू गंजे के हाथ पर ज़ोर से अपना हाथ मारकर कहा, "तू देखता रह क्या बनता है। यह रूस वाला बादशाह कुछ न कुछ ज़रूर करके रहेगा।"

उस्ताद मंगू तत्कालीन सोवियत व्यवस्था की साम्यवादी हलचलों के विषय में बहुत कुछ सुन चुका था और उसे वहां के नये कानून और दूसरी नयी चीज़ें

बहुत पसन्द थीं। इसीलिये उसने 'रूस वाले बादशाह' को 'इण्डिया एक्ट' अर्थात् नये कानून के साथ मिला दिया। और पहली अप्रैल को पुरानी व्यवस्था में जो नये परिवर्तन पैदा होने वाले थे वह 'उन्हें' 'रूस वाले बादशाह' के प्रभाव का परिणाम समझता था।

कुछ समय से पेशावर और अन्य शहरों में लाल कुर्ती वालों का एक आन्दोलन जारी था। उस्ताद मंगू ने इस आन्दोलन को अपने मस्तिष्क में 'रूस वाले बादशाह' और फिर नये कानून के साथ खलत-मलत कर दिया था। इसके अलावा वह जब कभी किसी से सुनता कि फलां शहर में इतने बम बनाने वाले पकड़े गये हैं या फलां जगह इतने आदमियों पर विद्रोह के जुर्म में मुकदया चलाया गया है तो इन तभाम घटनाओं को नये कानून की पूर्व कार्रवाई समझता और मन ही मन बहुत प्रसन्न होता था।

एक दिन उसके तांगे में दो बैरिस्टर बैठे नये कानून पर बड़े ज़ोर से समीक्षा कर रहे थे और वह खामोशी से उनकी बातें सुन रहा था। उनमें से एक दूसरे से कह रहा था—

"नये कानून का दूसरा भाग फेडरेशन है जो मेरी समझ में अभी तक नहीं आया। ऐसी फेडरेशन संसार के इतिहास में आज तक न सुनी गयी न देखी गयी है। राजनीतिक दृष्टिकोण से देखने पर भी यह फेडरेशन बिल्कुल गलत है बल्कि यूं कहना चाहिये कि यह कोई फेडरेशन है ही नहीं।"

इन बैरिस्टरों के बीच जो बातचीत हुई, चूंकि उसमें अधिकांश शब्द अंग्रेज़ी के थे, इससे उस्ताद मंगू उपर्युक्त वाक्यों को किसी तरह समझा और उसने ख्याल किया कि ये लोग हिन्दुस्तान में नये कानून के आने को बुरा समझते हैं और नहीं चाहते कि इनका वतन आज़ाद हो। चूंकि इस विचार के प्रभावाधीन उसने कई बार इन दो बैरिस्टरों को घृणा की दृष्टि से देखकर मन ही मन में कहा, "टोड़ी बच्चे !"

जब कभी वह किसी को दबी ज़बान में 'टोड़ी बच्चा' कहता तो दिल में यह महसूस करके बड़ा खुश होता था कि उसने इस नाम को सही जगह प्रयोग किया है। और यह कि वह शरीफ आदमी और 'टोड़ी बच्चे' में अन्तर करने की क्षमता रखता है।

इस घटना के तीसरे दिन गवर्नमेण्ट कालेज के तीन छात्रों को अपने तांगे

में बिठाकर मज़ंग जा रहा था कि उसने इन तीन लड़कों को आपस में बात करते, सुना—

"नये कानून ने मेरी उम्मीदें और बढ़ा दी हैं। अगर···साहब असेम्बली के मेम्बर हो गये तो किसी सरकारी दफ्तर में नौकरी ज़रूर मिल जायेगी।"

"वैसे भी बहुत-सी जगहें और निकलेंगी। शायद इसी गड़बड़ी में हमारे हाथ भी कुछ आ जाये।"

"हां-हां, क्यों नहीं।"

"वे बेकार ग्रेजुएट जो मारे-मारे फिर रहे हैं उनमें कुछ तो कमी होगी।"

इस गुफ्तगू ने उस्ताद मंगू के दिल में नये कानून का महत्त्व और भी बढ़ा दिया और उसको ऐसी 'चीज़' समझने लगा जो बहुत चमकती हो। 'नया कानून—!' और वह दिन में कई बार सोचता—'यानी कोई नई चीज़।' और हर बार उसकी नज़रों के सामने अपने घोड़े का वह नया साज़ आ जाता जो उसने दो वर्ष हुए चौधरी खुदाबख्श से बड़ी अच्छी तरह ठोक-बजाकर खरीदा था। इस साज़ पर जब वह नया था, जगह-जगह लोहे की निकल चढ़ी हुई कीलें चमकती थीं और जहां-जहां पीतल का काम था वह तो सोने की तरह दमकता था। इस दृष्टि से भी 'नये कानून' का चमक-दमक वाला होना भी ज़रूरी था।

पहली अप्रैल तक उस्ताद मंगू ने नये कानून के विरुद्ध और उसके हक में बहुत कुछ सुना मगर उसके विषय में जो कल्पना वह अपने मन में कायम कर चुका था, बदल न सका। वह समझता था कि पहली अप्रैल को नये कानून के आते ही सब मामला साफ हो जायेगा और उसको यकीन था कि उसके आने पर जो चीज़ें नज़र आयेंगी उनसे इसकी आंखों को ज़रूर ठंडक पहुंचेगी।

अन्ततः मार्च के इकतीस दिन खत्म हो गये और अप्रैल के शुरू होने में रात के कुछ खामोश घण्टे बाकी रह गये। मौसम सामान्य के प्रतिकूल सर्द था और हवा में ताज़गी थी। पहली अप्रैल को सुबह-सबेरे उस्ताद मंगू उठा और अस्तबल में जाकर तांगे में घोड़े को जोता और बाहर निकल गया। उसका मन आज असाधारण रूप से प्रसन्न था—वह नये कानून को देखने वाला था।

उसने सुबह के सर्द धुंधलके में कई तंग और खुले बाज़ारों का चक्कर लगाया, मगर उसे हर चीज़ पुरानी नज़र आई—आसमान की तरह पुरानी। उसकी निगाहें आज खासतौर पर नया रंग देखना चाहती थीं, मगर सिवाय इस

कलगी के जो रंग-बिरंगे पर्दों से बनी थी और उसके घोड़े के सिर पर जमी हुई थी, और सब चीज़ें पुरानी नज़र आती थीं। यह नयी कलगी उसने नये कानून की खुशी में 31 मार्च को चौधरी खुदाबख्श से साढ़े चौदह आने में खरीदी थी।

घोड़े की टापों की आवाज़, काली सड़क और उसके आसपास थोड़ा-थोड़ा फासला छोड़कर लगाये हुए बिजली के खम्भे, दुकान के बोर्ड, इसके घोड़े के गले में पड़े घुंघरुओं की झनझनाहट, बाज़ार में चलते-फिरते आदमी···इनमें से कौन-सी चीज़ नई थी, ज़ाहिर है कि कोई भी नहीं। लेकिन उस्ताद मंगू मायूस नहीं था।

"अभी बहुत सबेरा है। दुकानें भी तो सबकी सब बन्द हैं।" इस ख्याल से इसे सन्तोष था। इसके अतिरिक्त वह यह भी सोचता था, "हाईकोर्ट में नौ बजे के बाद ही काम शुरू होता है। अब इससे पहले नये कानून का क्या नज़र आयेगा।"

जब उसका तांगा गवर्नमेंट कालेज के दरवाज़े पर पहुंचा तो कालेज के घड़ियाल ने बड़े रौब से नौ बजाये। जो विद्यार्थी कालेज के बड़े दरवाज़े से बाहर निकल रहे थे, खुशपोश थे। मगर उस्ताद मंगू को न जाने उनके कपड़े मैले-मैले से क्यों नज़र आये। शायद इसकी वजह यह थी कि उसकी निगाहें आज किसी चमकीले दृश्य को देखने वाली थीं।

तांगे को दायें हाथ मोड़कर वह थोड़ी देर के बाद फिर अनारकली में था। बाज़ार की आधी दुकानें खुल चुकी थीं और अब लोगों का आवागमन भी बढ़ गया था। हलवाई की दुकानों पर ग्राहकों की खूब भीड़ थी। मनिहारी वालों की नुमाइशी चीज़ें शीशे की अलमारियों में लोगों को आमन्त्रित कर रही थीं और बिजली के तारों पर कई कबूतर आपस में लड़-झगड़ रहे थे। मगर उस्ताद मंगू के लिये इन तमाम चीज़ों में कोई दिलचस्पी न थी। वह नये कानून को देखना चाहता था। ठीक उस तरह जिस तरह वह अपने घोड़े को देख रहा था।

जब उस्ताद मंगू के घर में बच्चा पैदा होने वाला था तो उसने चार-पांच महीने बड़ी बेकरारी में गुज़ारे थे। उसको यकीन था कि बच्चा किसी न किसी दिन ज़रूर पैदा होगा। मगर वह इन्तज़ार की घड़ियां नहीं काट सकता था। वह चाहता था कि अपने बच्चे को केवल एक नज़र देख ले। उसके बाद वह पैदा होता रहे। चुनांचे इस दुर्दमनीय इच्छा के प्रभावस्वरूप उसने कई बार अपनी बीमार पत्नी के पेट को दबा-दबाकर और उसके ऊपर कान रख-रखकर अपने बच्चे के बारे

में जानना चाहा था, मगर नाकाम रहा। एक बार वह इन्तज़ार करते-करते इतना तंग आ गया कि अपनी पत्नी पर बरस ही पड़ा था—

"तू हर वक्त मुर्दे की तरह पड़ी रहती है। उठ, ज़रा चल-फिर। तेरे अंग में थोड़ी-सी ताकत तो आये। यूं तख्ता बने रहने से कुछ न हो सकेगा। तू समझती है कि इस तरह लेटे-लेटे बच्चा जन देगी ?"

उस्ताद मंगू स्वभाव से ही बहुत जल्दबाज था। वह प्रत्येक कारण को व्यावहारिक रूप में देखने का न सिर्फ इच्छुक था बल्कि जिज्ञासु भी था। उसकी पत्नी गंगावती उसकी इस प्रकार की बेकरारियों को देखकर प्रायः यह कहा करती थी—"अभी कुआं खोदा नहीं गया और तुम प्यास से बेहाल हो रहे हो।"

कुछ भी हो, मगर उस्ताद मंगू नये कानून के इन्तज़ार में इतना बेकरार नहीं था जितना उसे अपने स्वभाव के अनुसार होना चाहिए था। वह आज नये कानून को देखने के लिये घर से निकला था। ठीक उसी तरह जैसे गांधी या जवाहरलाल के जलूस का दृश्य देखने के लिए निकलता था।

लीडरों की महानता का अन्दाज़ा उस्ताद मंगू सदा उनके जलूस के हंगामों और उनके गले में डाले हुए फूलों के हारों से किया करता था। अगर कोई लीडर गेंदे के फूलों से लदा हो तो उस्ताद मंगू के नज़दीक वह बड़ा आदमी है। और अगर किसी लीडर के जलूस में भीड़ के कारण दो-तीन फसाद होते-होते रह जायें तो उसकी निगाहों में वह और भी बड़ा था। अब नये कानून को अपने मस्तिष्क की इसी तराजू में तौलना चाहता था।

अनारकली से निकलकर वह मालरोड की चमकीली सतह पर अपने तांगे को आहिस्ता-आहिस्ता चला रहा था कि मोटरों की दुकान के पास उसे छावनी की एक सवारी मिल गयी। किराया तय करने के बाद उसने अपने घोड़े को चाबुक दिखाया और दिल में यह ख्याल किया—

"चलो यह भी अच्छा हुआ—शायद छावनी ही से इस नये कानून का कुछ पता चल जाये।"

छावनी पहुंचकर उस्ताद मंगू ने सवारी को उसकी लक्षित मंज़िल पर उतार दिया और जेब से सिगरेट निकालकर बायें हाथ की आखिरी दो अंगुलियों में दबाकर सुलगाया और अगली सीट के गद्दे पर बैठ गया—जब उस्ताद मंगू को किसी सवारी की तलाश नहीं होती थी या उसे किसी बीती हुई घटना पर

गौर करना होता था तो वह आमतौर पर अगली सीट छोड़कर पिछली सीट पर बड़े सन्तोष से बैठकर अपने घोड़े की बागें दायें हाथ के गिर्द लपेट लिया करता था। ऐसे मौकों पर उसका घोड़ा थोड़ा-सा हिनहिनाने के बाद बड़ी धीमी चाल चलना शुरू कर देता था। गोया उसे कुछ देर के लिए भाग-दौड़ से छुट्टी मिल गयी है। घोड़े की चाल और उस्ताद मंगू के मस्तिष्क में विचारों का आगमन बहुत सुस्त थे। जिस तरह घोड़ा धीरे-धीरे कदम उठा रहा था उसी तरह उस्ताद के मस्तिष्क में कानून के विषय में नयी कल्पनाएं प्रवेश कर रही थीं।

वह नये कानून की मौजूदगी में म्युनिसिपल कमेटी से तांगों के नम्बर मिलने के तरीके पर गौर कर रहा था और इस ध्यान देने योग्य बात को नये कानून की रोशनी में देखने की कोशिश कर रहा था। वह इस सोच-विचार में गर्क था। उसे यूं मालूम हुआ जैसे किसी सवारी ने उसे बुलाया है। पीछे पलट कर देखने से उसे सड़क के इस तरफ दूर बिजली के खम्भे के पास एक 'गोरा' खड़ा दिखाई दिया जो उसे हाथ से बुला रहा था।

जैसाकि बताया जा चुका है, उस्ताद मंगू को गोरों से बेहद नफरत थी। जब उसने अपने ताज़ा ग्राहक गोरे की शक्ल में देखा तो उसके मन में नफरत की भावना जाग उठी।

पहले उसके जी में आयी कि बिल्कुल ध्यान न दे और उसको छोड़कर चला जाये, मगर बाद में उसको ख्याल आया। उनके पैसे छोड़ना भी बेवकूफी है। कलगी पर जो मुफ्त में साढ़े चौदह आने खर्च कर दिये हैं, उनकी जेब ही से वसूल करने चाहिए। चलो चलते हैं।

खाली सड़क पर बड़ी सफाई से तांगा मोड़कर उसने घोड़े को चाबुक दिखाया और आंख झपकने में वह बिजली के खम्भे के पास था। घोड़े की बागें खींचकर उसने तांगा ठहराया और पिछली सीट पर बैठे-बैठे गोरे से पूछा—

"साहब बहादुर, कहां जाना मांगता है ?"

इस सवाल में बहुत अधिक व्यंग्यात्मक ढंग था। साहब बहादुर कहते वक्त उसका ऊपर का मूंछोंभरा होंठ नीचे की ओर खिंच गया और पास ही गाल के इस तरफ जो मद्धम-सी लकीर नाक के नथुने से ठोड़ी के ऊपरी हिस्से तक चली आ रही थी, एक झटके के साथ गहरी हो गयी। जैसे किसी ने नुकीले चाकू से शीशम की सांवली लकड़ी में धारी डाल दी। उसका चेहरा हंस रहा था और

अपने अन्दर उसने उस 'गोरे' को सीने की आग में जलाकर भस्म कर डाला था।

जब 'गोरे' ने जो बिजली के खम्भे की ओट में हवा का रुख बचाकर सिगरेट सुलगा रहा था, मुड़कर तांगे के पायदान की तरफ कदम बढ़ाया तो अचानक उस्ताद मंगू और उसकी निगाहें चार हुईं और ऐसा मालूम हुआ कि एक वक्त आमने-सामने की बन्दूकों से गोलियां खारिज हुईं और आपस में टकराकर एक आग का बगूला बनकर ऊपर को उड़ गयीं।

उस्ताद मंगू जो अपने दायें हाथ से बाग के बल खोलकर तांगे पर से नीचे उतरने वाला था, अपने सामने खड़े गोरे को यूं देख रहा था जैसे वह उसके अस्तित्व के कण-कण को अपनी निगाहों से चबा रहा है और गोरा कुछ इस तरह अपनी नीली पतलून पर से अनपेक्षित चीज़ें झाड़ रहा है, जैसे वह उस्ताद मंगू के इस हमले से अपने अस्तित्व के कुछ भाग को सुरक्षित रखने का प्रयत्न कर रहा था।

गोरे ने सिगरेट का धुआं निगलते हुए कहा, "जाना मांगता है या फिर गड़बड़ करेगा ?"

"वही है।" उसने ये शब्द अपने मुंह के अन्दर ही अन्दर दुहराये और साथ ही उसे पूरा यकीन हो गया कि वह गोरा जो उसके सामने खड़ा था, वही है जिससे पिछले वर्ष उसकी झड़प हुई थी। और इस व्यर्थ के झगड़े में, जिसका कारण गोरे के दिमाग में चढ़ी हुई शराब थी, उसे विवशतापूर्वक बहुत-सी बातें सहनी पड़ी थीं। उस्ताद मंगू ने गोरे का दिमाग दुरुस्त कर दिया होता, बल्कि उसके पुर्ज़े उड़ा दिये होते, मगर वह विशेष कारणवश खामोश हो गया था। उसको पता था कि इस प्रकार के झगड़ों में अदालत का नज़ला आमतौर पर कोचवानों पर ही गिरता है।

उस्ताद मंगू ने पिछले वर्ष की लड़ाई और पहली अप्रैल के नये कानून पर गौर करते हुए गोरे से कहा, "कहां जाना मांगता है ?"

उस्ताद मंगू के लहजे में चाबुक जैसी तेज़ी थी।

गोरे ने जवाब दिया, "हीरा मण्डी।"

"किराया पांच रुपये होगा।" उस्ताद मंगू की मूंछें थरथराईं।

यह सुनकर गोरा हैरान हो गया। वह चिल्लाया, "पांच रुपये ? क्या तुम···"

"पांच रुपये।" यह कहते हुए उस्ताद मंगू का दाहिना बालों-भरा हाथ भिंचकर एक वज़नी घूंसे की शक्ल अख्तियार कर गया—"क्यों जाते हो—या बेकार बातें बनाओगे ?"

उस्ताद मंगू का लहजा ज्यादा सख्त हो गया।

गोरा पिछले वर्ष की घटना को दृष्टि में रखकर उस्ताद मंगू के सीने की चौड़ाई नज़रअन्दाज़ कर चुका था। वह ख्याल कर रहा था कि उसकी खोपड़ी फिर खुजला रही है। इस साहसपूर्ण विचार के प्रभावाधीन वह तांगे की ओर अकड़कर बढ़ा और अपनी छड़ी से उस्ताद मंगू को तांगे पर से नीचे उतरने का इशारा किया। बेंत की यह पालिश की हुई पतली छड़ी उस्ताद मंगू की मोटी रान के साथ दो-तीन बार छुई। उसने खड़े-खड़े ऊपर से छोटे कद के गोरे को देखा जैसे वह अपनी निगाहों के वज़न ही से उसे पीस डालना चाहता है। फिर उसका घूंसा कमान में से तीर की तरह से ऊपर को उठा और आंख झपकते ही गोरे की ठुड्डी के नीचे जम गया। धक्का देकर उसने गोरे का पैर हटाया और नीचे उतरकर उसे धड़ाधड़ पीटना शुरू कर दिया।

विस्मित और चकित गोरे ने इधर-उधर सिमटकर उस्ताद मंगू के वज़नी घूंसों से बचने की कोशिश की और जब देखा कि उसके विरोधी पर दीवानगी की-सी हालत छाई हुई है और उसकी आंखों में से अंगारे बरस रहे हैं तो उसने ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाना शुरू किया। इस चीख व पुकार ने उस्ताद मंगू की बांहों का काम और भी तेज़ कर दिया जो गोरे को जी भरकर पीट रहा था और साथ-साथ यह कहता जाता था—

"पहली अप्रैल को भी वही अकड़फूं···पहली अप्रैल को भी वही अकड़फूं—अब हमारा राज है बच्चा !"

लोग जमा हो गये और पुलिस के दो सिपाहियों ने बड़ी मुश्किल से गोरे को उस्ताद मंगू की पकड़ से छुड़ाया। उस्ताद मंगू दो सिपाहियों के बीच खड़ा था। उसकी चौड़ी छाती फूली हुई सांस के कारण ऊपर-नीचे हो रही थी। मुंह से झाग बह रहा था और अपनी मुस्कराती हुई आंखों से आश्चर्यचकित भीड़ की तरफ देखकर वह अपनी हांफती हुई आवाज़ में कह रहा था—

"वे दिन गुज़र गए जब खलील खां फाख्ता उड़ाया करते थे—अब नया

कानून है, मियां— नया कानून।"

और बेचारा गोरा अपने बिगड़े हुए चेहरे के साथ बेवकूफों की तरह कभी उस्ताद मंगू की तरफ देखता था और कभी भीड़ की तरफ।

उस्ताद मंगू को पुलिस के सिपाही थाने में ले गए। रास्ते में और थाने के अन्दर कमरे में वह 'नया कानून, नया कानून' चिल्लाता रहा मगर किसी ने एक न सुनी।

"नया कानून, नया कानून—क्या बक रहे हो—कानून वही है पुराना।"

और उसको हवालात में बन्द कर दिया गया।

शिकारी औरतें

मैं आज आपको चन्द शिकारी औरतों के किस्से सुनाऊंगा। मेरा ख्याल है कि आपका भी कभी उनसे वास्ता पड़ा होगा।

मैं बम्बई में था। फिल्मिस्तान से आम तौर पर बिजली ट्रेन से छः बजे घर पहुंच जाया करता था, लेकिन उस रोज़ मुझे देर हो गयी। इसलिये कि 'शिकारी' की कहानी पर वाद-विवाद होता रहा।

मैं जब बम्बई सेन्ट्रल के स्टेशन पर उतरा तो मैंने एक लड़की को देखा, जो थर्ड क्लास कम्पार्टमेंट से बाहर निकली। उसका रंग गहरा सांवला था। नाक-नक्शा ठीक-ठाक था। जवान थी। उसकी चाल बड़ी अनोखी-सी थी। ऐसा लगता था कि फिल्म का दृश्य लिख रही है।

मैं स्टेशन से बाहर आया और पुल पर विक्टोरिया गाड़ी का इन्तज़ार करने लगा। मैं तेज़ चलने का आदी हूं, इसलिए मैं दूसरे मुसाफिरों से बहुत पहले बाहर निकल आया था।

विक्टोरिया आयी और मैं उसमें बैठ गया। मैंने कोचवान से कहा कि आहिस्ता-आहिस्ता चले, इसलिये कि फिल्मिस्तान में कहानी पर बहस करते-करते मेरी तबीयत परेशान हो गयी थी। मौसम सुहावना था। विक्टोरिया वाला आहिस्ता-आहिस्ता पुल पर से उतरने लगा।

जब हम सीधी सड़क पर पहुंचे तो एक आदमी सिर पर टाट से ढका हुआ मटका उठाये आवाज़ लगा रहा था—"कुल्फी—कुल्फी!"

जाने क्यों मैंने कोचवान से विक्टोरिया रोक लेने को कहा और उस कुल्फी बेचने वाले से कहा कि एक कुल्फी दो। मैं असल में अपनी तबीयत की परेशानी किसी न किसी तरह दूर करना चाहता था।

उसने मुझे एक दोने में कुल्फी दी। मैं खाने ही वाला था कि अचानक कोई धम्म से विक्टोरिया में आन घुसा। काफी अन्धेरा था। मैंने देखा तो वही गहरे